श्री तुलसी माता चालीसा

॥ दोहा ॥

जय जय तुलसी भगवती सत्यवती सुखदानी ।
नमो नमो हरि प्रेयसी श्री वृन्दा गुन खानी ॥

श्री हरि शीश बिरजिनी, देहु अमर वर अम्ब ।
जनहित हे वृन्दावनी अब न करहु विलम्ब ॥

॥ चौपाई ॥

धन्य धन्य श्री तलसी माता ।
महिमा अगम सदा श्रुति गाता ॥१॥

हरि के प्राणहु से तुम प्यारी ।
हरीहीं हेतु कीन्हो तप भारी ॥२॥

जब प्रसन्न है दर्शन दीन्हयो ।
तब कर जोरी विनय उस कीन्हयो ॥३॥

हे भगवन्त कन्त मम होहू ।
दीन जानी जनि छाडाहू छोहु ॥४॥

सुनी लक्ष्मी तुलसी की बानी ।
दीन्हो श्राप कध पर आनी ॥५॥

उस अयोग्य वर मांगन हारी ।
होहू विटप तुम जड़ तनु धारी ॥६॥

सुनी तुलसी हीं श्रप्यो तेहिं ठामा ।
करहु वास तुहू नीचन धामा ॥७॥

दियो वचन हरि तब तत्काला ।
सुनहु सुमुखी जनि होहू बिहाला ॥८॥

समय पाई व्हौ रौ पाती तोरा ।
पुजिहौ आस वचन सत मोरा ॥९॥

तब गोकुल मह गोप सुदामा ।
तासु भई तुलसी तू बामा ॥१०॥

कृष्ण रास लीला के माही ।
राधे शक्यो प्रेम लखी नाही ॥११॥

दियो श्राप तुलसिह तत्काला ।
नर लोकही तुम जन्महु बाला ॥१२॥

यो गोप वह दानव राजा ।
शङ्ख चुड नामक शिर ताजा ॥१३॥

तुलसी भई तासु की नारी ।
परम सती गुण रूप अगारी ॥१४॥

अस द्वै कल्प बीत जब गयऊ ।
कल्प तृतीय जन्म तब भयऊ ॥१५॥

वृन्दा नाम भयो तुलसी को ।
असुर जलन्धर नाम पति को ॥१६॥

करि अति द्वन्द अतुल बलधामा ।
लीन्हा शंकर से संग्राम ॥१७॥

जब निज सैन्य सहित शिव हारे ।
मरही न तब हर हरिही पुकारे ॥१८॥

पतिव्रता वृन्दा थी नारी ।
कोऊ न सके पतिहि संहारी ॥१९॥

तब जलन्धर ही भेष बनाई ।
वृन्दा ढिग हरि पहुच्यो जाई ॥२०॥

शिव हित लही करि कपट प्रसंगा ।
कियो सतीत्व धर्म तोही भंगा ॥२१॥

भयो जलन्धर कर संहारा ।
सुनी उर शोक उपारा ॥२२॥

तिही क्षण दियो कपट हरि टारी ।
लखी वृन्दा दुःख गिरा उचारी ॥२३॥

जलन्धर जस हत्यो अभीता ।
सोई रावन तस हरिही सीता ॥२४॥

अस प्रस्तर सम ह्रदय तुम्हारा ।
धर्म खण्डी मम पतिहि संहारा ॥२५॥

यही कारण लही श्राप हमारा ।
होवे तनु पाषाण तुम्हारा ॥२६॥

सुनी हरि तुरतहि वचन उचारे ।
दियो श्राप बिना विचारे ॥२७॥

लख्यो न निज करतूती पति को ।
छलन चह्यो जब पारवती को ॥२८॥

जड़मति तुहु अस हो जड़रूपा ।
जग मह तुलसी विटप अनूपा ॥२९॥

धग्व रूप हम शालिग्रामा ।
नदी गण्डकी बीच ललामा ॥३०॥

जो तुलसी दल हमही चढ़ इहैं ।
सब सुख भोगी परम पद पईहै ॥३१॥

बिनु तुलसी हरि जलत शरीरा ।
अतिशय उठत शीश उर पीरा ॥३२॥

जो तुलसी दल हरि शिर धारत ।
सो सहस्त्र घट अमृत डारत ॥३३॥

तुलसी हरि मन रञ्जनी हारी ।
रोग दोष दुःख भंजनी हारी ॥३४॥

प्रेम सहित हरि भजन निरन्तर ।
तुलसी राधा में नाही अन्तर ॥३५॥

व्यन्जन हो छप्पनहु प्रकारा ।
बिनु तुलसी दल न हरीहि प्यारा ॥३६॥

सकल तीर्थ तुलसी तरु छाही ।
लहत मुक्ति जन संशय नाही ॥३७॥

कवि सुन्दर इक हरि गुण गावत ।
तुलसिहि निकट सहसगुण पावत ॥३८॥

बसत निकट दुर्बासा धामा ।
जो प्रयास ते पूर्व ललामा ॥३९॥

पाठ करहि जो नित नर नारी ।
होही सुख भाषहि त्रिपुरारी ॥४०॥

॥ दोहा ॥

तुलसी चालीसा पढ़ही तुलसी तरु ग्रह धारी ।
दीपदान करि पुत्र फल पावही बन्ध्यहु नारी ॥

सकल दुःख दरिद्र हरि हार ह्वै परम प्रसन्न ।
आशिय धन जन लड़हि ग्रह बसही पूर्णा अत्र ॥

लाही अभिमत फल जगत मह लाही पूर्ण सब काम ।
जेई दल अर्पही तुलसी तंह सहस बसही हरीराम ॥

तुलसी महिमा नाम लख तुलसी सूत सुखराम ।
मानस चालीस रच्यो जग महं तुलसीदास ॥

paramsoul.com